माननीय उच्च न्यायालय, उत्तराखण्ड, नैनीताल।
निर्णय की तिथि : 26.07.2022
पीठासीन– मा0 न्यायमूर्ति श्री मनोज कुमार तिवारी,
रिट याचिका (प्र0) सं0– 3397 सन् 2016

गुलशन पाहवा व अन्य ..... याचीकाकर्तागण

(याचीकाकर्तागण की ओर से अधिवक्ता श्री निखल सिंघल)

.....बनाम.....

दरगाह पीर दरियानाथ जी श्रवणनाथ
नगर हरिद्वार व अन्य .....प्रत्यर्थीगण

(प्रत्यर्थीगण की ओर से कोई अधिवक्ता नहीं)

निर्णय

1. यह याचिका, याचिकाकर्तागण/किरायेदार की ओर से माननीय पंचम अपर जिला न्यायाधीश, हरिद्वार द्वारा खफीफा निगरानी संख्या 35 सन् 2015 में पारित निर्णय एवं आदेश दिनॉकित 11.11.2016 के विरूद्ध योजित की गई है जिसमें खफीफा जज/सिविल जज (जू0डि0) हरिद्वार द्वारा खफीफा वाद संख्या 04 सन् 2009 में पारित आदेश को अपास्त करते हुए पत्रावली मकान मालिक (लैण्डलॉर्ड) के प्रार्थना पत्र अन्तर्गत आदेश 15 नियम 5 सिविल प्रकिया संहिता पर पुनः सुनवाई हेतु प्रतिप्रेषित (Remanded Back) की गई थी।

2. खफीफा जज/सिविल जज (जू0डि0) हरिद्वार द्वारा पारित आदेश दिनॉकित 15.07.2015, जिसे निगरानी न्यायालय द्वारा अपास्त किया गया, की प्रति को याचिका के साथ संलग्नक–5 के रूप में संलग्न किया गया है जिसके अवलोकन से दर्शित होता है कि लैण्डलार्ड/वादी द्वारा एक प्रार्थना पत्र अन्तर्गत आदेश 15 नियम 5 सिविल प्रकिया संहिता यह कहते हुए प्रस्तुत किया गया था कि किरायेदार द्वारा आदेश 15 नियम 5 सिविल प्रकिया संहिता के प्रावधानों का पालन नहीं किया गया है, इसलिए उसका बचाव/रक्षा का अवसर बन्द/समाप्त किया जाना चाहिए।

उपरोक्त प्रार्थना पत्र पर याचिकाकर्तागण द्वारा आपत्ति प्रस्तुत की गई कि उनके द्वारा दिनॉक 01.02.2009 से दिनॉक 31.08.2009 तक का स्वीकृत किराया वादी के लिए उसके विद्वान अधिवक्ता को दिया गया तथा उसके बाद स्वीकृत किराया न्यायालय में जमा किया गया। न्यायालय खफीफा जज द्वारा लैण्डलार्ड द्वारा प्रस्तुत प्रार्थना पत्र को इस आधार पर खारिज किया गया कि इस बिन्दु/विवाद को दोनों पक्षकारों की सुनवाई के उपरान्त निर्णित किया जायेगा और किरायेदार का रक्षा/बचाव मात्र इस आधार पर समाप्त नहीं किया जायेगा कि किरायेदार द्वारा स्वीकृत किराया कुछ विलम्ब से जमा किया गया है। न्यायालय खफीफा जज द्वारा स्पष्ट राय व्यक्त/अंकित की गई कि प्रतिवादी/किरायेदार द्वारा दिनॉक 30.06.2015 तक का सम्पूर्ण स्वीकृत किराया जमा किया जा चुका है।

3. मकान मालिक द्वारा न्यायालय खफीफा जज द्वारा पारित उक्त आदेश को चुनौती देते हुए यह निगरानी धारा 25 प्रान्तीय लघुवाद न्यायालय अधिनियम, 1887 के अन्तर्गत प्रस्तुत की गयी है। विद्वान अपर जिला जज पंचम हरिद्वार द्वारा मकान मालिक की ओर से प्रस्तुत उक्त निगरानी को स्वीकार करते हुए विद्वान न्यायाधीश खफीफा न्यायालय द्वारा पारित आदेश को अपास्त किया गया। विद्वान निगरानी न्यायालय द्वारा पारित आदेश से व्यथित हो कर किरायेदार द्वारा इस न्यायालय के समक्ष यह याचिका योजित की गयी।

4. कोई कार्यवाही करने से पूर्व, आदेश 15 नियम 5 सिविल प्रक्रिया संहिता में निहित प्रावधान, जो उत्तर प्रदेश राज्य एवं उत्तराखण्ड राज्य में प्रभावी है, का अवलोकन किया जाना आवश्यक है जो इस प्रकार है :–

> **"5. गृहीत भाटक निक्षेप करने की असफलता के लिए प्रतिरक्षा को अमान्य करना–** (1) पट्टाकर्ता द्वारा अपने पट्टा के अवसान के बाद पट्टेदार की बेदखली के लिए और प्रयोग तथा अधिभोग के लिए भाटक या प्रतिकर की वसूली के लिये किसी वाद में प्रतिवादी वाद की प्रथम सुनवाई के समय या उसके पूर्व अपने द्वारा बकाया होना स्वीकृत की गयी संपूर्ण धनराशि को उस पर प्रतिवर्ष नौ प्रतिशत की दर से ब्याज सहित जमा करेगा और चाहे वह बकाया होना स्वीकार करता है या नही, वह वाद के जारी रहने के दौरान नियमित रूप से उसके प्रोद्भूत होने की

तिथि से एक सप्ताह भीतर बकाया मासिक धनराशि को जमा करेगा और उसके द्वारा बकाया होना स्वीकार की गयी संपूर्ण धनराशि या पूर्वोक्त बकाया मासिक धनराशि को जमा करने में व्यतिक्रम की स्थिति में, न्यायालय उप नियम (2) के प्रावधानों के अध्याधीन, उसकी प्रतिरक्षा को अमान्य कर सकेगा।

स्पष्टीकरण–1. ''प्रथम सुनवाई'' अभिव्यक्ति से लिखित कथन दाखिल करने या समनों में वर्णित सुनवाई की तारीख अभिप्रेत है, या जहां एक से अधिक ऐसी तारीखों का वर्णन किया गया है, वहां वर्णित अन्तिम तारीख अभिप्रेत है।

स्पष्टीकरण 2. ''उसके द्वारा बकाया होना गृहीत सम्पूर्ण धनराशि'' अभिव्यक्ति से पट्टाकर्ता के लेखा पर भवन के सम्बन्ध में स्थानीय प्राधिकारी को संदत्त करों, यदि कोई हो, के सिवाय कोई अन्य कटौती न करने के बाद बकाये की स्वीकृत अवधि के लिए भाटक की स्वीकृत दर पर संगणित सम्पूर्ण धनराशि, चाहे भाटक के रूप में हों या प्रयोग तथा अधिभोग के लिए प्रतिकर के रूप में हो, और किसी न्यायालय में निक्षिप्त धनराशि, यदि कोई हो, अभिप्रेत है।

स्पष्टीकरण–3. (1) ''बकाया मासिक धनराशि'' से पट्टाकर्ता के लखा पर भवन के सम्बन्ध में स्थानीय प्राधिकारी को संदत्त करों, यदि कोई हो, के सिवाय कोई अन्य कटौती न करने के बाद भाटक की स्वीकृति दर पर प्रत्येक मास बकाया धनराशि, चाहे भाटक के रूप में हो या प्रयोग तथा अधिभोग के लएप्रतिकर के रूप में हो, अभिप्रेत है।

(2) प्रतिरक्षा को अमान्य करने के लिए आदेश के पूर्व, वह न्यायालय इसके लिए प्रतिवादी द्वारा किये गये अभ्यावेदन पर उस सन्दर्भ में विचार कर सकेगा, परन्तु ऐसा अभ्यावेदन प्रथम सुनवाई के या उपधारा (1) में निर्दिष्ट सपताह के समापन के, यथास्थिति, 10 दिनों के अन्तर्गत किया गया हो।
(3). इस नियम के अधीन निक्षिप्त धनराशि वादी द्वारा किसी समय आहरित की जा सकेगी,

परन्तु ऐसे आहरण का प्रभाव निक्षिप्त धनराशि की शुद्धता को विवास्पद बनाते हुए वादी द्वारा किसी दावा के प्रतिकूल नहीं होगा,

परन्तु यह और कि निक्षिप्त धनराशि में से कोई धनराशि शामिल है, जिसे घटाने योग्य होने के लिए या किसी लेखा का होने के लिए निक्षेपकर्ता द्वारा दावा किया गया है, तो न्यायालय प्रतिवादी से ऐसी धनराशि के लिए आहरित करने की अनुमति देने के पहले प्रतिभूति देने की अपेक्षा कर सकेगा।''

5. आदेश 15 नियम 5(1) सिविल प्रक्रिया संहिता, के अवलोकन से यह प्रकट होता है कि यह प्रावधान न्यायालय को इस हेतु सक्षम बनाता है कि यदि किरायेदार स्वीकृत किराया मय ब्याज एवं भविष्य का स्वीकृत किराया जमा करने में असफल रहता है, तो न्यायालय किरायेदार की रक्षा का अवसर समाप्त कर सकता है, हालांकि न्यायालय प्रत्येक मामले में ऐसा करने के लिए बाध्य नहीं है। इस सन्दर्भ में माननीय उच्चतम् न्यायालय द्वारा बिमल दास जैन बनाम गोपाल अग्रवाल, 1981 (3) एस0सी0सी0–486 में विधि व्यवस्था की गई है, जिसका प्रासंगिक अंक/उद्धरण नीचे पुनः प्रस्तुत किये गये हैं–

''4. उच्च न्यायालय ने पूरन चंद (सुप्रा) में अवधारित किया है कि यदि उप–नियम (2) द्वारा विचारित अभ्यावेदन उसमें निर्धारित समय के भीतर नहीं किया गया था, तो अदालत के पास समय से परे किए गए अभ्यावेदन पर विचार करने और इसे करने में देरी को माफ करने का कोई अधिकार नहीं था। पीठ ने यह भी कहा कि जहां कोई अभ्यावेदन नहीं दिया गया था या समय से परे दायर किया गया था तो न्यायालय बचाव को बन्द करने के लिए बाध्य थी और उसके पास इस मामले में कोई विवेकाधिकार नहीं था।

5. इस मामले में तथ्यों से ऐसा प्रतीत होता है कि अपीलकर्ता द्वारा उप–नियम (2) के तहत कोई अभ्यावेदन नहीं दिया गया था। हमारे सामने एकमात्र सवाल उठाया गया है कि क्या इस तरह के अभ्यावेदन के अभाव में, न्यायालय अपीलकर्ता के बचाव को खत्म करने के लिए बाध्य थी।

6. आदेश XV के नियम 5 की व्यापक समझ से हमें ऐसा लगता है कि नियम का वास्तविक निर्माण इस प्रकार होना चाहिए जिसका उप–नियम (1) प्रतिवादी को मुकदमे की पहली सुनवाई से पहले, उसके द्वारा स्वीकार की गई पूरी राशि को नौ प्रतिशत प्रति वर्ष की दर से ब्याज के साथ जमा करने के लिए बाध्य करता है और आगे, चाहे वह देय राशि को स्वीकार करता है या नहीं, मुकदमे की निरंतरता के दौरान नियमित रूप से जमा करने के लिए इसके उपार्जन की तारीख से एक सप्ताह के भीतर देय मासिक राशि जमा करने के लिए बाध्य करता है और कोई भी जमा करने में किसी भी चूक की स्थिति में, ''न्यायालय उप–नियम (2) के प्रावधानों के अधीन बचाव को बन्द कर सकती है। अब हम इस पर आएंगे कि इसका क्या अर्थ है। उप–नियम (2) बचाव को हटाने का आदेश देने से पहले न्यायालय को प्रतिवादी द्वारा किए गए किसी भी अभ्यावेदन पर विचार करने के लिए बाध्य करता है। दूसरे शब्दों में, प्रतिवादी को अपने बचाव को रद्द किए जाने के खिलाफ अदालत में अभ्यावेदन देने का वैधानिक अधिकार दिया गया है। यदि कोई, अभ्यावेदन किया है,

तो न्यायालय को इसके गुण–दोष के आधार पर विचार करना चाहिए, और फिर यह तय करना चाहिए कि बचाव को बंद कर दिया जाना चाहिए या नहीं। यह प्रतिवादी में स्पष्ट रूप से निहित एक अधिकार है और उसे रिकॉर्ड पर सामग्री लाकर दिखाने में सक्षम बनाता है कि वह कथित डिफॉल्ट का दोषी नहीं है अथवा यदि व्यतिक्रम हुआ है, तो इसके लिए उसके पास अच्छा कारण है और यह भी असंभव नहीं है कि अभिलेख पर पहले से ही ऐसी सामग्री हो सकती है। ऐसी स्थिति में, क्या यह कहा जा सकता है कि उप–नियम (1) न्यायालय को बचाव समाप्त करने के लिए बाध्य करता है? हमें याद रखना चाहिए कि उप–नियम (1) के तहत बचाव को बन्द करने का आदेश एक प्रकार से दंड की प्रकृति होती है। इसलिए ऐसे मामलों में यह उत्तरदायित्व न्यायालय पर है कि न्यायालय को ऐसी शक्ति का उपयोग यांत्रिक रूप से नहीं किया जाना है। यह न्यायालय के पास सुरक्षित विवेकाधिकार निहित है कि अगर अभिलेख में पहले से मौजूद तथ्यों और परिस्थितियों के आधार पर उसे ऐसा नहीं करने का अच्छा कारण मिलता है तो वह बचाव को खारिज न करे। यह हमेशा न्यायालय के निर्णय का विषय होगा कि वह यह निर्णीत करे कि उप–नियम (2) के तहत प्रतिनिधित्व की अनुपस्थिति के बावजूद, उसके समक्ष मौजूद सामग्री पर बचाव को हटा दिया जाना चाहिए या नहीं। उप–नियम (1) में ''हो सकता है'' शब्द केवल बचाव को समाप्त करने के लिए न्यायालय को शक्ति प्रदान करता है, परन्तु यह व्यतिक्रम के हर मामले में ऐसा करने के लिए बाध्य नहीं करता है। इस हद तक, हम पूरन चंद (सुप्रा) मामले में उच्च न्यायालय द्वारा अपनाए गए दृष्टिकोण से सहमत होने में असमर्थ हैं, इसलिए हमारी राय है कि उच्च न्यायालय ने आदेश XV के नियम 5 के खंड (1) के प्रावधानों पर अनावश्यक रूप से संकीर्ण विचार व्यक्त किया है।

6. इस प्रकार, यह देखा जा सकता है कि रक्षा को समाप्त करने की शक्ति का उपयोग उसे वैधानिक जनादेश मानकर नहीं किया जाना चाहिए, क्योंकि इस तरह की शक्ति का प्रयोग गम्भीर दण्डात्मक परिणाम देता है, इसलिए न्यायालय के पास ऐसा नहीं करने का विवेकाधिकार है, यदि तथ्यों पर उसे ऐसा नहीं करने का अच्छा कारण मिलता है। इसलिए, अभिलेख पर उपलब्ध तथ्यों और परिस्थितियों पर विचार करने के बाद और प्रतिनिधित्व पर विचार करने के बाद उनके प्रतिनिधित्व होने की स्थिति में शक्ति का उपयोग किया जाना चाहिए।

7. माननीय उच्चतम न्यायालय द्वारा संग्राम सिंह बनाम निर्वाचन अधिकरण, कोटा, भूरे के मामले में ए0आई0आर0 1955 एस0सी0–425 में अवधारित किया गया है कि ''प्रक्रिया का नियम'' प्राकृतिक न्याय के सिद्धांत पर आधारित है, जिसके लिए यह आवश्यक है कि पक्षकारों को बिना सुनवाई किये निर्णय नहीं लिया जाना चाहिए और ऐसी कार्यवाही जिसमें उनकी सम्पत्ति एवं जीवन को प्रभावित करने वाली कार्यवाही शामिल है, उनकी अनुपस्थिति में नहीं की जानी चाहिए।

आगे यह भी अवधारित किया गया है कि लेकिन मोटे तौर पर हमारी प्रक्रिया के नियमों को उस परन्तुक के अधीन, जहॉ भी सम्भव हो, उस सिद्धान्त के आलोक में ही बनाना व माना जाना चाहिए।

8. इस प्रकार, लघुवाद न्यायालय द्वारा आदेश 15 नियम 5 सी0पी0सी0 के तहत प्रस्तुत मकान मालिक के आवेदन को यह पाते हुए कि किरायेदार द्वारा आदेश 15 नियम 5 सी0पी0सी0 का पर्याप्त अनुपालन किया गया, खारिज कर दिया गया। तथापि, विद्वान निगरानी न्यायालय ने लघुवाद न्यायालय द्वारा पारित आदेश को केवल इस आधार पर निरस्त कर दिया कि किरायेदार द्वारा स्वीकृत किराया जमा करने में कुछ विलंब हुआ था और इस प्रकार के विलंब के लिए कोई स्पष्टीकरण नहीं है।

9. इस न्यायालय की राय में, मामले के तथ्यों के दृष्टिगत् विद्वान विचारण न्यायालय द्वारा पारित आदेश में निगरानी न्यायालय के हस्तक्षेप की आवश्यकता नहीं थी, क्योंकि प्रत्येक मामले में अदालत के लिए यह अनिवार्य नहीं है कि वह स्वीकार किए गए किराए को जमा करने में कुछ देरी के कारण बचाव को समाप्त कर दे। चूंकि विद्वान विचारण न्यायालय द्वारा इस मामले में अपने विवेकाधिकार को, अधिकार क्षेत्र के भीतर अच्छी तरह से प्रयोग किया गया था, इसलिए, विद्वान निगरानी न्यायालय ने विचारण न्यायालय द्वारा पारित आदेश में हस्तक्षेप करने में त्रुटि की है।

10. मंगत सिंह त्रिलोचन सिंह और अन्य बनाम सतपाल, जो (2003) 8 एस0सी0सी0 357 में रिपोर्ट किया गया था, के मामले में विचारण न्यायालय ने आदेश 15 नियम 5 के तहत किरायेदार के बचाव को बंद करने से इनकार कर दिया था, हालांकि, उच्च न्यायालय ने पुनरीक्षण क्षेत्राधिकार में निगरानी न्यायालय द्वारा पारित आदेश में हस्तक्षेप किया लेकिन माननीय उच्चतम् न्यायालय द्वारा यह अवधारित किया गया है कि विद्वान पुनरीक्षण न्यायालय द्वारा विचारण न्यायालय द्वारा अपनी क्षेत्राधिकारिता में पारित विधिक

आदेश में हस्तक्षेप किया जाना उचित नहीं था। प्रस्तर संख्या 9 व 13 का उद्धरण निम्नवत् उद्धरित है :–

> ''9. विचारण न्यायालय ने इस न्यायालय के उन निर्णयों (सुप्रा) पर विश्वास किया, जिन पर संहिता के आदेश 15 नियम 5 के प्रावधानों की व्याख्या पर हमारे सामने किरायेदारों के लिए भी भरोसा किया गया है। इस न्यायालय ने कहा है कि प्रत्येक मामले में न्यायालय के लिए यह अनिवार्य नहीं है कि वह केवल इसलिए बचाव को रद्द कर दे क्योंकि बकाया किराया जमा करने में विलंब हो रहा है। न्यायालय के पास ऐसे मामलों में विवेकाधिकार है और बचाव को बंद करने की शक्ति का उपयोग प्रत्येक मामले के तथ्यों और परिस्थितियों को ध्यान में रखते हुए किया जाना चाहिए।
> 13. किरायेदारों की ओर से दी गई अंतिम दलील में भी अत्यधिक बल है कि चूंकि विचारण न्यायालय ने बचाव को बंद करने और बकाया किराए को स्वीकार करने से इनकार करके अपने अधिकार क्षेत्र का कानूनी रूप से उपयोग किया था, इसलिए उच्च न्यायालय संहिता की धारा 115 के तहत अपने पुनरीक्षण अधिकार क्षेत्र का उपयोग करते हुए इसमें हस्तक्षेप नहीं कर सकता है।

11. उपरोक्त कारणवश, इस न्यायालय का विचार है कि विद्वान अपर जिला जज पंचम द्वारा लघुवाद निगरानी संख्या 35 सन् 2015 में पारित निर्णय अपास्त किये जाने योग्य है।

12. तदनुसार, रिट याचिका स्वीकार की जाती है तथा लघुवाद निगरानी संख्या 35 सन् 2015 मे ंपारित आक्षेपित निर्णय दिनॉकित 11.11.2016 को पास्त किया जाता है, जैसा कि उक्त लघुवाद वर्ष 2009 से लम्बित है इसलिए विद्वान अवर न्यायालय से अनुरोध है कि वह शीघ्रताशीघ्र उक्त वाद को निर्णीत करने का प्रयास करे।

(मनोज कुमार तिवारी, जे0)